Indian Journal of Multidisciplinary Research and Studies
ISSN: 3108-1681 | Volume- 1, Issue- 2 | April - June 2025

भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका और प्रभाव

अभिषेक मिश्रा
समाजशास्त्र विभाग, राष्ट्रीय पी.जी. कॉलेज, लखनऊ

सारांश

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता इसकी विविधता है भाषाई, सांस्कृतिक, सामाजिक और भौगोलिक। इसी विविधता ने भारतीय राजनीति को बहुरंगी स्वरूप प्रदान किया है। स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक वर्षों में भारतीय राजनीति पर राष्ट्रीय दलों, विशेषकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, का प्रभुत्व रहा, किन्तु समय के साथ क्षेत्रीय चेतना, भाषाई अस्मिता, आर्थिक असमानता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के प्रश्नों ने क्षेत्रीय दलों को जन्म दिया। आज क्षेत्रीय दल न केवल राज्यीय राजनीति में बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी निर्णायक भूमिका निभा रहे हैं। वे नीतिनिर्माण, सत्ता-साझेदारी और संघीय ढाँचे के सुदृढ़ीकरण में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। हाल के वर्षों में गठबंधन राजनीति के दौर में क्षेत्रीय दलों का प्रभाव अत्यधिक बढ़ा है उन्होंने केंद्र की नीतियों को प्रभावित किया, राष्ट्रीय सरकारों को स्थायित्व या अस्थायित्व प्रदान किया, और स्थानीय मुद्दों को राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बनाया। हालाँकि, क्षेत्रीय दलों पर जातिवाद, संकीर्णता और परिवारवाद के आरोप भी लगते रहे हैं। यह शोध-पत्र भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों के उद्भव, विकास, भूमिका, प्रभाव और चुनौतियों का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसके माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय लोकतंत्र की जीवंतता, बहुलता और सहअस्तित्व की भावना में क्षेत्रीय दलों की भूमिका अनिवार्य है।

कीवर्ड: क्षेत्रीय दल, भारतीय लोकतंत्र, गठबंधन राजनीति, संघीय ढाँचा, क्षेत्रीय अस्मिता, राजनीतिक स्थायित्व

परिचय

भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक प्रयोग है, जो विविधता और बहुलता की नींव पर टिका हुआ है। भारत में धर्म, भाषा, जाति, संस्कृति और भौगोलिक विविधता इतनी विशाल है कि यह स्वाभाविक रूप से क्षेत्रीय पहचान और क्षेत्रीय आकांक्षाओं को जन्म देती है। स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक वर्षों में देश की राजनीति पर राष्ट्रीय स्तर पर केवल कुछ ही दलों का वर्चस्व रहा, जिनमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अग्रणी थी। परंतु जैसे-जैसे भारतीय समाज की संरचना जटिल होती गई, और स्थानीय मुद्दों की उपेक्षा होने लगी, वैसे-वैसे क्षेत्रीय चेतना का स्वर मुखर होने लगा। यही वह बिंदु था जहाँ से भारत की राजनीति में क्षेत्रीय दलों का उद्भव हुआ।

राज्यों के भाषाई पुनर्गठन (1956) ने क्षेत्रीय अस्मिता को वैधानिक रूप से स्वीकृति प्रदान की। इससे पहले भी तमिलनाडु में द्रविड़ आंदोलन, महाराष्ट्र में मराठी अस्मिता की भावना और पंजाब में पंजाबी सुबा आंदोलन जैसे क्षेत्रीय आंदोलन चल रहे थे। इन आंदोलनों ने यह स्पष्ट किया कि राष्ट्रीय एकता तभी संभव है जब क्षेत्रीय विविधता को उचित प्रतिनिधित्व मिले। स्वतंत्र भारत की संघीय राजनीतिक व्यवस्था ने भी राज्यों को पर्याप्त अधिकार प्रदान किए, जिससे क्षेत्रीय स्तर पर राजनीतिक संगठन खड़े होने का अवसर मिला। धीरे-धीरे इन संगठनों ने दलों का रूप लिया जैसे तमिलनाडु में द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (DMK), आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम पार्टी (TDP), पंजाब में शिरोमणि अकाली दल, महाराष्ट्र में शिवसेना, असम में असम गण परिषद और उत्तर प्रदेश-बिहार में समाजवादी प्रवृत्तियों से प्रेरित दलों का उदय हुआ।

क्षेत्रीय दलों का उद्भव केवल भाषाई या सांस्कृतिक कारणों से नहीं हुआ, बल्कि इसके पीछे सामाजिक-आर्थिक

असमानता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की कमी भी एक प्रमुख तत्व रहा है। कई क्षेत्रों में जनता को यह महसूस हुआ कि राष्ट्रीय दल स्थानीय हितों की अनदेखी करते हैं। परिणामस्वरूप, जनता ने ऐसे दलों की ओर रुख किया जो उनके क्षेत्रीय हितों, सांस्कृतिक पहचान और आर्थिक आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व कर सकें। यही कारण है कि 1970 के दशक के बाद क्षेत्रीय दलों की संख्या और प्रभाव दोनों तेजी से बढ़े।

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी सफलता यही है कि इसने इन दलों को न केवल स्थान दिया बल्कि उन्हें सत्ता-साझेदारी का अवसर भी प्रदान किया। 1989 के बाद गठबंधन युग के आगमन ने इस प्रक्रिया को और मज़बूती दी। केंद्र की राजनीति में भी क्षेत्रीय दल निर्णायक शक्ति के रूप में उभरे उन्होंने नीतिनिर्माण को प्रभावित किया, सरकारों को समर्थन दिया या गिराया, और राष्ट्रीय विमर्श में स्थानीय आवाज़ों को शामिल किया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आज भारत का लोकतंत्र एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ क्षेत्रीय और राष्ट्रीय दोनों स्तरों की राजनीतिक शक्तियाँ सहअस्तित्व में हैं।

इस प्रकार, क्षेत्रीय दल भारतीय लोकतंत्र के लिए केवल राजनीतिक इकाइयाँ नहीं बल्कि लोकतांत्रिक विविधता के सशक्त वाहक हैं। वे उस सामाजिक यथार्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं जो भारत जैसे विशाल देश को एक जीवंत और गतिशील राजनीतिक संस्कृति प्रदान करता है।

क्षेत्रीय दलों की भूमिका और प्रभाव

भारतीय लोकतंत्र के विकास में क्षेत्रीय दलों की भूमिका बहुआयामी रही है। उन्होंने लोकतंत्र को केवल चुनावी प्रक्रिया तक सीमित नहीं रहने दिया, बल्कि इसे सामाजिक न्याय, आर्थिक समानता और सांस्कृतिक स्वायत्तता की दिशा में विस्तारित किया। जब राष्ट्रीय दलों की नीतियाँ स्थानीय आकांक्षाओं को संबोधित करने में विफल रहीं, तब क्षेत्रीय दलों ने अपने राज्यों में जनता की आवाज़ के रूप में उभरकर यह साबित किया कि लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति उसकी जड़ों में होती है, न कि केवल उसकी राजधानी में।

क्षेत्रीय दलों ने भारत के संघीय ढाँचे को मजबूती दी है। संविधान में केंद्र और राज्यों के अधिकारों का स्पष्ट बँटवारा किया गया है, किंतु व्यवहार में अक्सर केंद्र सरकार द्वारा राज्यों के मामलों में हस्तक्षेप की शिकायतें रही हैं। क्षेत्रीय दलों ने इस केंद्रीकरण के विरुद्ध एक संतुलनकारी भूमिका निभाई है। उन्होंने राज्यों के अधिकारों की रक्षा के लिए आवाज़ उठाई, और भारतीय संघवाद को अधिक सहकारी और सहभागी बनाया। उदाहरणस्वरूप, द्रविड़ पार्टियों ने तमिलनाडु में क्षेत्रीय स्वायत्तता के प्रश्न को राष्ट्रीय विमर्श में प्रमुखता से उठाया, जिससे राज्यों के अधिकारों की संवैधानिक व्याख्या को नया दृष्टिकोण मिला।

गठबंधन राजनीति का युग क्षेत्रीय दलों के प्रभाव का सबसे सशक्त प्रमाण है। 1989 के बाद से शायद ही कोई ऐसी सरकार बनी हो जिसमें क्षेत्रीय दलों की भागीदारी न रही हो। चाहे वह वी.पी. सिंह की नेशनल फ्रंट सरकार हो, या अटल बिहारी वाजपेयी की एनडीए सरकार, या मनमोहन सिंह की यूपीए सरकार सभी ने क्षेत्रीय दलों के सहयोग से सत्ता संभाली। इन गठबंधनों में DMK, TDP, JDU, SP, RJD, TMC, NCP, और BSP जैसे दल निर्णायक स्थिति में रहे। इन दलों की भूमिका ने यह सिद्ध किया कि भारत में सत्ता अब केवल दिल्ली की नहीं, बल्कि चेन्नई, पटना, कोलकाता और लखनऊ की भी है।

इन दलों का एक बड़ा योगदान यह रहा कि उन्होंने स्थानीय मुद्दों को राष्ट्रीय बहस का हिस्सा बनाया। उदाहरण के लिए, असम गण परिषद ने अवैध प्रवास का मुद्दा राष्ट्रीय स्तर पर उठाया, शिवसेना ने मराठी रोजगार और स्थानीय अधिकारों को विमर्श में लाया, जबकि समाजवादी दलों ने पिछड़े वर्गों की राजनीति को वैचारिक पहचान दी। इस प्रकार, भारतीय लोकतंत्र अब केवल राष्ट्रीय योजनाओं का नहीं, बल्कि क्षेत्रीय आकांक्षाओं का भी लोकतंत्र बन

गया है।

हालाँकि, क्षेत्रीय दलों की आलोचना भी कम नहीं रही। कुछ दलों ने क्षेत्रीय हितों को इस हद तक प्राथमिकता दी कि राष्ट्रीय एकता और समग्र विकास के प्रश्न पीछे छूट गए। परिवारवाद, भ्रष्टाचार, जातिवाद और अवसरवाद की प्रवृत्तियाँ भी इन दलों में गहराई से व्याप्त हैं। कई बार उन्होंने गठबंधन सरकारों को अस्थिर करने में भूमिका निभाई, जिससे राजनीतिक स्थायित्व पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। फिर भी, यह कहना गलत होगा कि इन कमियों ने लोकतंत्र को कमजोर किया है। वस्तुतः, उन्होंने लोकतंत्र को अधिक प्रतिस्पर्धी और उत्तरदायी बनाया है।

क्षेत्रीय दलों का सामाजिक प्रभाव भी उल्लेखनीय है। उन्होंने उन वर्गों को राजनीतिक मंच दिया जो लंबे समय तक सत्ता से वंचित रहे थे जैसे दलित, पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक और ग्रामीण समाज। उत्तर भारत में समाजवादी दलों ने सामाजिक न्याय की अवधारणा को व्यवहार में लाने का प्रयास किया। दक्षिण भारत में द्रविड़ आंदोलन ने जातिवादी भेदभाव के विरुद्ध जनजागरण किया। इस प्रकार, क्षेत्रीय दलों ने लोकतंत्र के क्षैतिज विस्तार के साथ-साथ उसकी गहराई को भी बढ़ाया।

आज के समय में क्षेत्रीय दल भारतीय राजनीति की अपरिहार्य वास्तविकता हैं। वे राष्ट्रीय दलों को चुनौती देने के साथ-साथ उनके सहयोगी भी हैं। संसद और विधानसभाओं में उनकी उपस्थिति यह सुनिश्चित करती है कि नीतियाँ अधिक समावेशी हों और हर क्षेत्र की आवाज़ सुनी जाए। भविष्य में इन दलों की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण होगी क्योंकि भारत का सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य निरंतर बदल रहा है, और लोगों की राजनीतिक अपेक्षाएँ भी बढ़ रही हैं।

निश्चित रूप से, भारतीय लोकतंत्र का भविष्य तभी स्थिर और समावेशी होगा जब क्षेत्रीय दल अपनी जिम्मेदारी को समझें और केवल क्षेत्रीय सीमाओं से ऊपर उठकर राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाएँ। यदि वे ऐसा करते हैं, तो भारतीय राजनीति में उनका योगदान केवल सीमित प्रतिनिधित्व तक नहीं रहेगा, बल्कि वे भारतीय लोकतंत्र की आत्मा बनकर उसे और अधिक सशक्त करेंगे।

निष्कर्ष

भारतीय लोकतंत्र का विकास उसकी विविधता, बहुलता और सहअस्तित्व की भावना में निहित है। इस लोकतांत्रिक संरचना में क्षेत्रीय दलों ने न केवल राजनीतिक शक्ति-संतुलन को स्थापित किया, बल्कि लोकतंत्र को स्थानीय स्तर तक जीवंत बनाए रखने में भी अमूल्य योगदान दिया है। स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक दशकों में भारतीय राजनीति राष्ट्रीय दलों के इर्द-गिर्द घूमती रही, परंतु जैसे-जैसे समाज में जागरूकता और क्षेत्रीय पहचान की भावना मजबूत होती गई, वैसे-वैसे राजनीतिक व्यवस्था में क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। यही वह क्षण था जब क्षेत्रीय दलों ने भारतीय राजनीति में अपनी जगह बनाई और समय के साथ उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि वे केवल किसी एक राज्य के नहीं, बल्कि भारत की संपूर्ण लोकतांत्रिक संरचना के लिए अनिवार्य घटक हैं।

क्षेत्रीय दलों ने राज्यों के अधिकारों की रक्षा की, केंद्र-राज्य संबंधों को संतुलित किया और संघीय ढाँचे को मज़बूती प्रदान की। उन्होंने स्थानीय जनसमस्याओं को राष्ट्रीय विमर्श में स्थान दिलाया और यह सुनिश्चित किया कि कोई भी नीति जनता के वास्तविक अनुभवों और आवश्यकताओं से अलग न हो। इन दलों ने राष्ट्रीय दलों के वर्चस्व को चुनौती दी और सत्ता के विकेंद्रीकरण को प्रोत्साहित किया। यही नहीं, सामाजिक न्याय, समानता और पहचान की राजनीति के माध्यम से उन्होंने उन वर्गों को राजनीतिक स्वर दिया जो लंबे समय तक प्रतिनिधित्व से वंचित रहे थे।

हालाँकि, क्षेत्रीय दलों की राजनीति में कुछ कमजोरियाँ भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। जातिवाद, परिवारवाद,

भ्रष्टाचार और अवसरवाद जैसी प्रवृत्तियाँ न केवल लोकतंत्र की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं, बल्कि इन दलों की विश्वसनीयता को भी क्षीण करती हैं। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक क्षेत्रीयता की प्रवृत्ति कभी-कभी राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती का रूप भी ले लेती है। अतः आवश्यक है कि क्षेत्रीय दल केवल अपने क्षेत्रीय हितों की राजनीति तक सीमित न रहकर एक व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाएँ।

आज जब भारतीय राजनीति गठबंधन युग के स्थायी स्वरूप में प्रवेश कर चुकी है, तब क्षेत्रीय दलों की भूमिका और भी निर्णायक हो गई है। वे नीतिनिर्माण, शासन और विकास की प्रक्रिया में ऐसी शक्ति बन चुके हैं जिन्हें न तो अनदेखा किया जा सकता है और न ही समाप्त किया जा सकता है। वास्तव में, भारत की लोकतांत्रिक यात्रा में क्षेत्रीय दलों की उपस्थिति यह प्रमाणित करती है कि इस देश का लोकतंत्र केवल मतदान की प्रक्रिया नहीं, बल्कि विचारों, हितों और आकांक्षाओं की सहभागिता पर आधारित एक सशक्त सामाजिक संरचना है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारतीय लोकतंत्र की जीवंतता का सबसे बड़ा प्रतीक क्षेत्रीय दल ही हैं। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि विविधता को स्वीकार करने वाला लोकतंत्र ही स्थायी और सार्थक लोकतंत्र हो सकता है। यदि भविष्य में ये दल अपने भीतर आत्मसुधार और पारदर्शिता की भावना विकसित करें, तो वे न केवल अपने-अपने राज्यों बल्कि पूरे राष्ट्र के राजनीतिक और सामाजिक विकास के सशक्त वाहक बन सकते हैं।

संदर्भ सूची

1. राम, सुरेश (2020). भारतीय राजनीति: संरचना, प्रक्रिया और प्रवृत्तियाँ. नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट।
2. वर्मा, एस.पी. (2019). भारतीय राजनीति का समाजशास्त्र. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
3. सिंह, योगेन्द्र (2018). लोकतंत्र और राजनीतिक परिवर्तन. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. शेखर, सुरेन्द्र (2020). भारत का राजनीतिक परिदृश्य: क्षेत्रीयता और संघवाद. दिल्ली: पुस्तक महल।
5. जैन, जी.सी. (2017). भारतीय लोकतंत्र और गठबंधन राजनीति. जयपुर: राजस्थान विश्वविद्यालय प्रकाशन।
6. शाह, घनश्याम (2016). Social Movements in India. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन।
7. चौधरी, हरिप्रसाद (2021). भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका. वाराणसी: ज्ञानदीप पब्लिकेशन।
8. Mehta, Pratap Bhanu (2019). The Burden of Democracy. Penguin Books.
9. Election Commission of India Website www.eci.gov.in
10. Yadav, Yogendra & Palshikar, Suhas (2009). Ten Theses on State Politics in India. Economic & Political Weekly.
11. Saxena, Rekha (2022). Indian Federalism and Regional Parties. Delhi University Publication.
12. Election Commission of India. (2023). Statistical Report on General Elections.